International Journal of Information Movement *Vol. 9 Issue X* *(February 2025)*
Website: www.ijim.in *ISSN: 2456-0553 (online)* **Pages 38-43**

लोक साहित्य में बाल कहानियों की परम्परा का विश्लेषण और विवेचन

विकास कुमार
शोधार्थी ,
हिन्दी विभाग
गुरुकुल काँगड़ी समविश्वविद्यालय, हरिद्वार, उत्तराखण्ड

सारांश- लोक साहित्य किसी भी समाज की सामूहिक चेतना, सांस्कृतिक स्मृति और परंपरागत ज्ञान का जीवंत दस्तावेज होता है। यह न केवल मनोरंजन का माध्यम है, बल्कि जीवन-मूल्यों, नैतिक शिक्षाओं, सामाजिक आचरण और जीवन-दृष्टि को पीढ़ी दर पीढ़ी संप्रेषित करने का एक सशक्त उपकरण भी है। मौलिक रूप से मौखिक परंपरा से जन्मा लोक साहित्य शहरी और शिक्षित वर्ग की अपेक्षा ग्रामीण, जनजातीय और सामान्य जनसमूह के बीच अधिक प्रचलित रहा है। यही कारण है कि यह साहित्य सहज, स्वाभाविक, संवादात्मक और संवेदनशील होता है, जो जनमानस के अनुभवों से जन्म लेता है और उनके जीवन के विविध पक्षों को अभिव्यक्त करता है।

बाल साहित्य की बात करें तो यह आधुनिक युग में एक पृथक विधा के रूप में विकसित हुआ है, किन्तु इसकी जड़ें कहीं गहरी लोक साहित्य में निहित हैं। बच्चों के मनोरंजन और शिक्षण के लिए गढ़ी गई लोक कहानियाँ एक समृद्ध परंपरा का निर्माण करती हैं, जिनमें परीकथाएँ, पशु-पक्षी आधारित किस्से, लोकनायकों की कहानियाँ, धार्मिक आख्यान, रीति-नीति की कथाएँ और प्राकृतिक घटनाओं से संबंधित गाथाएँ शामिल हैं। प्रारंभिक बालवस्था में बच्चों की सोच कल्पनात्मक, प्रश्नोन्मुखी और जिज्ञासु होती है। ऐसे में लोक कहानियाँ न केवल उन्हें मनोरंजन प्रदान करती हैं, बल्कि अप्रत्यक्ष रूप से नैतिक मूल्यों, जीवन-कौशल, और सामाजिक व्यवहार की शिक्षा भी देती हैं। ये कहानियाँ बच्चों के मन में अच्छाई-बुराई, न्याय-अन्याय, सच्चाई-झूठ और परिश्रम-प्रपंच के भेद को स्पष्ट करने में सहायक होती हैं। साथ ही, इन कहानियों के माध्यम से भाषा, बोली, रीति-रिवाज और लोक आस्थाओं का भी संचरण होता है। बाल मानस की बुनावट को समझते हुए जब लोक जीवन के अनुभवों को प्रतीकात्मक रूप से प्रस्तुत किया जाता है, तो वह एक रोचक कथा में परिवर्तित हो जाता है। दादी-नानी की कहानियाँ, गाँव की चौपालों में सुनाए जाने वाले किस्से, त्योहारों और मेलों में बोली जाने वाली गाथाएँ—इन सबमें बच्चों को अपने परिवेश के प्रति समझ, अपनत्व और जिज्ञासा का भाव मिलता है। यह शोध-पत्र लोक साहित्य में निहित बाल कहानियों की परंपरा का ऐतिहासिक और साहित्यिक विश्लेषण करता है, तथा आधुनिक परिप्रेक्ष्य में उनकी प्रासंगिकता को रेखांकित करता है।

मूल शब्द – बाल कहानियाँ, लोक साहित्य, बाल विकास, हिन्दी साहित्य, मौखिक परंपरा, नैतिक शिक्षा

1.0 प्रस्तावना

साहित्य की विशाल परम्परा को देखते हुए दो बातें स्पष्ट रूप से सामने आती हैं-- (1) समग्र साहित्य का कुछ भाग ऐसा है, जिसकी रचना लोक या ग्राम जीवन की छाया में हुई है, परिणामतः उसमें परम्परित शास्त्रीयता का अभाव है और लोक जीवन की सादगी है, (2) कुछ साहित्य ऐसा है, जिसकी रचना परिनिष्ठित शैली में शास्त्र के अनुसार हुई है। अतः उसमें शैलीगत कौशल और शास्त्रीय जटिलता है । इस विवेचन के आधार पर साहित्य दो रूपों में हो जाता है- लोक साहित्य और शास्त्रीय साहित्य । दोनों प्रकार के साहित्य के आधार तथा विवेच्य तत्त्व अलग-अलग हैं। पर मानव जीवन की अनुभूत्तियां, सुख-दुख

के भावों की अभिव्यक्ति दोनों प्रकार के साहित्य का उद्देश्य है। साथ ही, लोक साहित्य की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि यह आदि साहित्य है और सहज रूप में उद्भावित हुआ है, जबकि शास्त्रीय साहित्य शास्त्र के विकास के साथ-साथ विकसित होता गया है। यही कारण है कि लोक साहित्य में जहां ताजगी और स्वाभाविकता की मात्रा अधिक होती है, वहीं शास्त्रीय साहित्य में रुदिबद्धता और कृत्रिमता की सम्भावना रहती है। ऐसी स्थिति में शास्त्रीय साहित्य लोक साहित्य से तत्त्व ग्रहण करके अपने को सजीव बनाने का प्रयत्न करता है। तुलसी की गीतावली के अनेक गीतों का बंधान लोक गीतों के आधार पर है। हिंदी खड़ी बोली साहित्य में भी ग्रामांचलीय कथा और काव्य दोनों प्रकार के साहित्य की रचना हुई है।

वास्तव में शास्त्रीय साहित्य का विकास लोक साहित्य की भूमि पर ही हुआ है। क्रमशः शास्त्रीय साहित्य में शास्त्र तत्त्व बढ़ता गया और लोक साहित्य से उसकी पृथकता भी बढ़ती गई। शास्त्र तत्त्व के बढ़ने का कारण मानव की प्रतिभा और उद्भावना शक्ति है। इसी प्रतिभा से विभिन्न शास्त्रीय स्थापनाओं और वादों की वृद्धि हुई, जिनसे साहित्य जटिल हुआ। यह प्रतिभा शास्त्र अध्येताओं और सुशिक्षिताओं की थी ।

उधर सहज लोक साहित्य अपनी मूल विशेषताओं के साथ अपने ही स्थान पर रह गया, वहीं फलता-फूलता रहा। लोक साहित्य स्रष्टा सदा सभ्य संसार से अलग रहे और अपने आदिम जीवन को अपना वास्तविक जीवन मानकर चलते रहे ।[i]

इस प्रकार लोक साहित्य, साहित्य का मूल अथवा आदि साहित्य है और शास्त्रीय साहित्य परवर्ती रचना है। आदि साहित्य होने के कारण ही इसमें सदा स्वाभाविकता रही है, जिसकी ओर शास्त्रीय साहित्य आकृष्ट होता रहा है।

2.0 **लोक साहित्य की विशेषताएँ**

(1) लोक साहित्य आदि मानव का आदि साहित्य है। यह उस युग का साहित्य है, जब मानव प्रकृति की गोद में रहता था। उसके जीवन में प्रकृति की ही प्रधानता थी। एक ओर उसका जीवन था, दूसरी ओर पशु-पक्षियों का । पशु-पक्षियों तथा वृक्षों और लताओं से उसका इतना अधिक सान्निध्य था कि वह उनको अपने जीवन का अंग समझता था। अपनी तीव्र कल्पनाशक्ति से उसने यह मान लिया था कि पशु-पक्षी ही नहीं, वृक्ष-लताएँ तक मानव-से बात कर सकते हैं। इसी आधार पर लोक साहित्य में पशु, पक्षी, वृक्ष और लताएँ आपस में भी बातें करते हैं और मानव से भी ।

(2) इसकी रचना लोक हृदय ने सहज रूप में की है। यह साहित्य प्रयत्नज नहीं । 'ग्राम में प्रतिदिन विभिन्न कार्य भी चल रहे हैं एवं उन्हीं के बीच एक चिरंतन रागिनी बज उठने की चेष्टा भी पा रही है।[ii]

यों लोक साहित्य लोक जीवन की सच्ची अभिव्यक्ति है। जैसे जिस देश के लोक जीवन के उपादान रहे हैं, वैसा ही उस देश का लोक साहित्य रहा है। लोक जीवन की आशा, आकांक्षा, अभाव और अनुभूतियाँ इस साहित्य में क्रमबद्ध अंकित होती गई हैं ।

(3) सहज उद्भावना के कारण इसके पाठों में एकरूपता नहीं है। वस्तुतः लोक साहित्य एक व्यक्ति की रचना नहीं है, जनसमुदाय की सर्जना है।[iii] प्रकृति और परिस्थिति के अनुसार समुदाय ने उसमें अंतर भी कर लिया। इस प्रकार पाठांतर भी होते चले गये। ये सभी पाठ महत्त्वपूर्ण हैं, क्योंकि सभी में लोक जीवन सहज रूप में व्यक्त है। पं० रामनरेश त्रिपाठी ने 'भगवती देवी' शीर्षक लोक गाथा के तीन-चार पाठ संकलित किए है। पर इन सभी पाठों में किसी भी पाठ को अन्य पाठ से निम्न नहीं कहा जा सकता ।[iv]

बैलेड अंग्रेजी का एक लोक छंद है जिसमें किसी जनप्रचलित कथा को वर्णनात्मक काव्य के रूप में सादगी तथा अशास्त्रीयता के साथ प्रस्तुत किया जाता है। गायक किसी लोक बाजे पर इस कथात्मक काव्य को गा गाकर सुनाते हैं। पर इसका कोई निश्चित पाठ नहीं प्राप्त होता। गायक अपनी इच्छानुसार इसमे परिवर्तन करते रहते हैं किसी भी पाठ के संबंध में नहीं कहा जा

सकता कि वही बैलेड का निश्चित पाठ है।[v]

(4) लोक साहित्य मौखिक परम्परा से प्राप्त साहित्य है। किसी अनादि-काल में उसकी रचना हुई। यह रचना आगे की पीढ़ी की वाणी पर बढ़ी । उसने उसमें परिवर्तन, परिवर्द्धन किया और आगे की पीढ़ी को भावनामय लोक साहित्य का रिवथ सौंप दिया। मौखिक परम्परा में लोक साहित्य एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को उत्तराधिकार रूप में प्राप्त होता रहा है। पीढ़ियों और व्यक्तियों के परिवर्तन ने ही लोक साहित्य की भावधारा में परिवर्तन किया और उसे नवीनता प्रदान की।[vi]

लोक साहित्य के मौखिक संचरण ने कहीं-कहीं मूलरूप को ही समाप्त कर दिया अथवा इतना परिवर्तित कर दिया कि अन्य रूप मूल रूप जितने ही महत्त्व-पूर्ण हो गए । आज आल्हाखंड बुंदेली, अवधी और भोजपुरी तीनों रूपों में प्राप्त होता है और तीनों रूपों में महत्त्वपूर्ण है। पर जगनिक का मूलरूप कोई एक ही रहा होगा, जो बुंदेलखंडी होगा । मौखिक परम्परा ने लोक साहित्य में स्वरूप वैभिन्न्य अवश्य पैदा किया, पर इससे एक लाभ भी हुआ कि आदिमयुगीन मानव संस्कृत से आधुनिक सभ्यता तक के सांस्कृतिक इतिहास का समावेश भी हो गया ।[vii]

(5) सम्पूर्ण लोक साहित्य असद् पर सद् की विजय के दृष्टिकोण से अनुप्राणित है। वस्तुतः लोक साहित्य मानव मन में निहित आदर्शों का साहित्य है। इस साहित्य में महान् नैतिक गुण हैं, उच्चकोटि की मार्मिकता है और भौतिक जगत में बुद्धि, विवेक, चतुराई, वाक्पाटव, व्यावहारिकता आदि गुण हैं तो आध्यात्मिक जगत में करुणा, ममता, सत्य, प्रेम, सदाचार आदि का प्रसार है ।[viii]

लोक साहित्य का नायक, प्रायः विपत्तियों में फँसता है। पर वह बड़े साहस के साथ विपत्तियों का सामना करता है और अन्त में विजय प्राप्त करता है। इस प्रकार लोक साहित्य के अन्तर्गत मुख्यतः कहानियों में लक्ष्य पूर्वकल्पित्त होता है, जिसकी प्राप्ति के लिए घटनाक्रम की सृष्टि की जाती है।

(6) एक देश की विभिन्न भाषाओं के लोक साहित्य या विश्व के लोक साहित्य में समानता प्राप्त होती है। यह समानता है शैलीशिल्प, वर्णन, सौन्दर्य-विधान, कथा-अभिप्राय (मोटिफ) और कथानकों में ।[ix]

जिस लोक साहित्य का विश्लेषण किया गया है, वह केवल बड़ों के लिए ही नहीं; बालकों के अनुरंजन के लिए भी है। प्राचीन काल में चूल्हे के पास या आग के पास अथवा सरस श्रोताओं की मजलिस में सुनाई जाने वाली कहानियाँ तथा गीत बड़ों और बालकों, दोनों के लिए ही होते थे। उनमें उन तत्त्वों का प्रायः समावेश होता ही नहीं था जिससे बड़ों और बालकों के रसास्वादन में अन्तर पैदा हो ।[x]

यह साहित्य तो वह है जिसे बड़ों के जन समूह ने बड़ों के साथ-साथ बालकों के अनुरंजन के लिए भी प्रस्तुत किया था। पर लोक साहित्य के अन्त-र्गत साहित्य की एक धारा वह भी है जिसकी रचना बालकों न सहज रूप में खेलते समय या गाते समय की है। यह बालकों के लिए, बालकों का और बालकों द्वारा निर्मित लोक साहित्य है। बालकों के अनुक खेलगीत, सहगान और खेल कथाएँ बालकों की अपनी रची हुई हैं। उनमें एक पंक्ति एक बालक की होगी, दूसरी पंक्ति दूसरे बालक की और तीसरी पंक्ति तीसरे की। इस प्रकार सम्पूर्ण बाल समाज की सहज वृत्तियों का उसमें समावेश ह । मनोवेज्ञा-निक दृष्टि से यह बाल लोक साहित्य अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि इसमें बालकों की अपनी संस्कृति की ही अभिव्यक्ति नहीं, उनके मनोवैज्ञानिक अध्ययन के सूत्र भी हैं।

लोक साहित्य बाल लोक कहानियों के भण्डार से भरा हुआ है। बाल कथा साहित्य में लोक कहानियों का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। मानव सभ्यता के विकास क्रम में विभिन्न समयों पर इन कहानियों की रचना हुई। आदि मानव ने अपनी आशा आकांक्षा की भावनाओं को इन कहानियों में ढाल दिया, उनका आदि जीवन इन कहानियों में प्रतिबिबित्त हो उठा । कालांतर

में अपनी शैली की सरलता, प्राकृतिक परिवेश और सार्वजनीन भावनाओं की अभिव्यक्ति ने इन कहानियों को बाल साहित्य के अन्तर्गत ला रखा और लोक साहित्य बाल साहित्य की अमर निधि हो गया ।

इस दृष्टि से लोक साहित्य में सांस्कृतिक विकास के तत्त्व निहित हैं। उसमें मानव विकास के इतिहास का प्रतिबिंब उपलब्ध है। लोक साहित्य बाल साहित्य के रूप में सभी भाषाओं में आकस्मिक रूप से ही मान्य हुआ और फिर बाल साहित्य में उसने अपना स्थायी स्थान बना लिया । लोक कहानियों की रचना समूह मानव या संपूर्ण समाज की रचना है। किसी भी लोक कथा का कोई व्यक्तिगत रचयिता नहीं है। उनकी रचना में वयोवृद्ध लोगों का योग है। पर ये कहानियाँ बालकों को भी रुचिकर लगेंगी, यह बात बहुत पहले ही मालूम कर ली गई थी। विश्व के सभी देशों में बूढ़ी स्त्रियों, दादियों, नानियों और माँओं ने बालकों को सुनाने के लिए इन कहानियों को ग्रहण कर लिया। भारत में बूढ़ी दादी, नानी, और माँओं ने मुख्य रूप से बच्चों को ये कहानियाँ सुनाई हैं। बँगला में 'दादी मार भुली' (दादी माँ की झोली) नाम से लोक कथाएँ प्रकाशित हुई हैं। रूस में तो व्यावसायिक स्तर पर इन कहानियों को सुनाने वाले हुए हैं। आज भी वहाँ सफेद सागर के माहीगीर कोरगूयेव, साइबेरिया के शिकारी सोरोंकोविकोव, गोर्की क्षेत्र के सामूहिक किसान कोवाल्योव और वोरोनेज की अद्‌भुत कहानी कहने वाली नानी कुप्रियानिखा जैसे सुप्रसिद्ध किस्सागो हैं, जिनकी कहानियाँ लोग बहुत बड़ी संख्या में सुनते हैं ।[xi]

भारत में भी लोक कहानियाँ सुनाने वाले अनेक स्त्री पुरुष हैं। शहरी बच्चे तो पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से एक सीमा में अपनी कहानी की रुचि को संतुष्ट कर लेते हैं, यद्यपि इन बच्चों की संख्या भी थोड़ी ही है, पर गाँव के बच्चों की कहानी की सन्तुष्टि कहानी सुनाने की कला में कुशल वयोवृद्ध महिलाओं और पुरुषों के द्वारा होती है। वैसे तो प्रत्येक घर में थोड़ी बहुत कहानियाँ सभी सुना लेते हैं, पर कहानी सुनाने की कला कुछ ही व्यक्तियों को प्राप्त होती है। ऐसी महिलाएँ अपने सामाजिक जीवन में अत्यन्त सामान्य होती हैं। पर कहानी सुनाते समय उनकी प्रतिभा ही कार्य करती है। इसी प्रकार पुरुष भी अत्यन्त सामान्य होते हैं- किसान, कुम्हार, नाई आदि, पर जब कहानी सुनाते हैं तो जादूगर की भाँत्ति पूरे वातावरण को बाँध लेते हैं। एक महान कवि के कविता पाठ से उनकी किस्सागोई कम नहीं होती। बिना किसी प्रकार का पारिश्रमिक लिये विशुद्ध पर मनोरंजनवृत्ति से रात-रात भर कहानियाँ सुनाकर वे आबालवृद्ध सबके हृदय में साहित्यिक संस्कार उत्पन्न भी करते हैं और ऐसे संस्कारों की रक्षा भी करते हैं।

कहानी सुनाकर दूसरों को मंत्रमुग्ध करने के मूल में कहानी सुनाने की विशिष्ट कला है। श्री वी० बी० देशपांडे ने कहानी सुनाते समय निम्नांकित बात्तों की ओर संकेत किया है:-

1. कहानी का तार्किक विकास
2. क्रमशः विचारों का संप्रेषण
3. असंबद्ध और अनावश्यक विस्तार से बचाव
4. बीच-बीच में प्रश्न पूछकर श्रोताओं की रुचि को सजीव बनाए रखना
5. घटनाओं का साभिनय उल्लेख
6. स्वरों का प्रभावशाली उतार-चढ़ाव
7. कहानी से नीति का उद्‌घाटन
8. नीति जीवन पर कैसे घटित होती है, यह समझाकर कहानी की समाप्त

बच्चों को कहानी सुनानेवालों में कहानी सुनाने की उपर्युक्त विशेषताएँ अवश्य रहती हैं, जिससे उनका कहानी सुनाना आकर्षक हो जाता है।

2.1 लोक कहानियाँ भले ही मूलतः बड़ों के लिए और गौणरूप से बच्चों के लिए रही हों, पर बच्चों ने इनसे जीवनीशक्ति प्राप्त की है। जिस समय आज की भाँति उनके लिए साहित्य नाम की कोई चीज न थी, उस समय लोक कहानियों से अपने उपयोग की सामग्री लेकर उन्होंने अपने स्वत्व की रक्षा की।

लोक साहित्य में बाल लोक कहानियाँ दो रूपों में प्राप्त होती हैं-

1- लोक जीवन की कहानियाँ

2- खेल की कहानियाँ

लोक जीवन की कहानियाँ वे हैं, जिनका सम्बन्ध लोक जीवन के प्रधान तत्त्व पशु-पक्षी और प्रकृति से है। अधिकांश बाल लोक कहानियाँ ऐसी ही हैं। कहानियों का सत्य मानव जीवन का ही होता है, पर उसे पशु-पक्षियों के माध्यम से व्यक्त किया जाता है । पशु-पक्षियों के प्रति बालकों के मन में अत्यधिक आकर्षण होता है। इसका कारण सम्भवतः भिन्न जगत से प्राप्त आश्चर्य भावना की परितृप्त है। बालक का संसार में आगमन एक आश्चर्यलोक में आगमन है। इस आश्चर्यलोक में सबसे अधिक विभिन्नतापूर्ण और गतिशील होते हैं पशु-पक्षी । भिन्न-भिन्न रंग-रूप, भिन्न-भिन्न बोलियाँ, भिन्न-भिन्न क्रियाएँ और भिन्न गतियाँ बालक की मनोतृप्ति के विशेष साधन हैं। फिर इनकी बातें सुनकर और इनके कार्य देखकर बालक आनन्द विभोर हो जाता है। उसका मन करता है कि वह इन्हीं पशु-पक्षियों में बैठा रहे, इन्हीं की कहानियाँ सुनता रहे। यह सम्वेदनशीलता और भावातिरेक का परिणाम है। अपनी बाल्यावस्था में बालक कवि की भाँति ही सम्वेदनशील और निष्कलुष होता है। अंग्रेज कवि वर्ड र्सवर्थ ने ऐसे बालक को देवदूत और दार्शनिक की संज्ञा दी थी। बाल लोक कहानियों में बालक को काव्य जैसा आनन्द प्राप्त होता है। नीति इन कहानियों में अंनिहित रहती है, प्रत्यक्ष नहीं और शैली इतनी सरल होती है जैसे बालक की अपनी बातचीत हो ।

3.0 संदर्भ -

[i] द पीप्यूल दैट लिव इन मोर आर लेस प्रीमिटिव कंडीशन आउटसाइड द स्फीयर आफ साफिस्टिकेटेड इनफ्लू एंसेज- डा० दास ए स्टडी आफ ओरिशन फोक्लोर (हिंदी साहित्य का वृहद इतिहास षोडश भाग, पृष्ठ 4)

[ii] रवीन्द्रनाथ : ले० डा० शिवनाथ, पृ० 261

[iii] वही : पृ० 277

[iv] कविता कौमुदी : पं० रामनरेश त्रिपाठी, भाग 5

[v] हिंदी साहित्य का वृहद् इतिहास षोडश भाग, पृ० 61 : प्रस्तावना से उद्धृत

[vi] डॉ० श्री प्रसाद, हिन्दी बाल साहित्य की रूपरेखा, पृ० 44

[vii] ग्रिम को कहानियाँ अनु० डा० विष्णुस्वरूप उपस्थापन, पृ० 3

[viii] वही, पृ० 3

[ix] वही, पृ० 3

[x] डॉ० श्री प्रसाद, हिन्दी बाल साहित्य की रूपरेखा, पृ० 45

[xi] डॉ० श्री प्रसाद, हिन्दी बाल साहित्य की रूपरेखा, पृ० 49